[ISSN : 2348-2605]

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

(त्रैमासिक हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान पत्रिका)

www.gejournal.net

E-mail: hindires@gmail.com

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान
शोध पत्रिका
(त्रैमासिक हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान पत्रिका)

तुलसीदास की समन्वय भावना

गुरमीत कौर

हिन्दी साहित्य के सन्दर्भ में मध्यकालीन काव्य से तात्पर्य उस काल से है जिसमें मुख्यतः भागवत धर्म के प्रचार–प्रसार के परिणाम स्वरूप भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था। इस युग में भक्ति केवल वैष्णव धर्म तक ही सीमित नही बल्कि शैव, शात्य आदि धर्मों के अतिरिक्त बौद्ध और जैन सम्प्रदाय तक इस प्रभाव से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। वैदिक भक्ति परम्परा के समानान्तर दक्षिण भारत में द्रविड़ –संस्कृतिगर्भित पृथक शक्ति परम्परा का सूत्रपात हो चुका था जिसमें शरणागति और समर्पण की भावना प्रबल रूप से पायी जाती थी और कालान्तर में दक्षिणात्य आचार्यों द्वारा उत्तर भारत में भी लोकप्रिय बनी और इस प्रकार उत्तर और दक्षिण की दोनों परम्पराओं का मिलन हो गया जिसका निदर्षन आड्यारों तथा आडियारों के भक्ति साहित्य में सुलभ है।

भक्ति भावना के सन्दर्भ में पांचरात्र भी कम उल्लेखनीय नहीं है। इसका मुख्य उद्देष्य भक्तिमार्ग के साधन का निरूपण रहा है। मध्यकाल में भारतीय समाज में वर्णों और जातियों का विषिष्ट स्थान था और सभी के अपने–अपने धर्म–विष्वास, रीति–रस्में और आचार–विचार, पद्धतियों के संस्कार तथा अभ्यास थे। फलस्वरूप समाज में किसी न किसी रूप में संघर्ष विद्यमान था। परन्तु उन्हीं से होकर ऐसी जीवनी–षक्ति का संचार भी होता रहा है कि हम डूबते–डूबते भी उबरते चले गये हैं। निष्प्रभ या निस्तेज न होकर नव–जीवन की अरुणिमा से महिमा–मण्डित होते रहे हैं। इन सबके मूल में हमारी समन्वय–साधना की प्रवृत्ति उजागर रही है। समन्वय भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण विषेषता रही है। इस देष में कितनी ही संस्कृतियों का आगमन हुआ पर वे सब घुल–मिलकर एक हो गई। समन्वय शब्द सामान्यतः दो अर्थों में व्यवहृत होता है। यह विस्तृत और व्यापक अर्थ में संयोग और पारस्परिक सम्बंध से निर्वाह का द्योतक है और संकुचित तथा विषिष्ट अर्थ है– परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली बातों के आभास्ति विरोध का परिहार करके सामंजस्य स्थापना। मध्यकाल में भारतीय समाज का बहुत अधिक नैतिक पतन हो गया था। लोगों

की धर्म, ईष्वर तथा नैतिक आदर्षों के प्रति आस्था समाप्त हो गयी थी। धर्म, उपासना के स्थान पर आडम्बरपूर्ण उपासना पद्धतियों का बोलबाला था। धर्म साधना न रहकर व्यापार बन गया था। ऐसी स्थिति में देष की सामाजिक व सांस्कृतिक स्थैर्य के लिए आवष्यक था कि ऐसा चरित्र और मंगलकारी आदर्ष सामने आये जिससे भारतीय जनता में पुरुषार्थ की प्रतिष्ठा हो सके। जो ऐसे वातावरण में भारतीय विचारकों ने कितनी ही दार्षनिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, साहित्यिक और सौन्दर्यमूलक विचारधाराओं को निःसंकोच भाव से ग्रहण किया।

पाश्चात्य मार्क्सवादी दर्षन जहाँ द्वन्द्वात्मकता में समस्याओं के हल खोजता है वहीं भारतीय दर्षन और संस्कृति भिन्न–भिन्न विरोधी तत्वों का सुन्दर समन्वय में हल ढूंढती है। तुलसीदास जी इस समन्वय भावना को अपनी रचनाओं को आधार बनाकर समाज के सामने समन्वय का अदभुत आदर्ष प्रस्तुत किया। वे कलिकाल के वाल्मीकि है और कदाचित् महात्मा बुद्ध के बाद भारत के सबसे बड़े लोकनायक हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, ''भारतवर्ष का लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय करने के अपार धैर्य लेकर आया हो। भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधिनी संस्कृतियाँ, साधनाएँ, जातियाँ, आचार, विचार और पद्धतियाँ प्रचलित हैं। तुलीसदास का सारा काव्य समन्वय भी विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, गार्हस्थ्य और वैराग्य का, भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का, निर्गुण और सगुण का, पुराण और काव्य का, पुराण और काव्य का, भावावेष और अनासक्त चिन्तन का, पांडित्य और अपांडित्य का समन्वय है।''[1]

कर्म–भक्ति–ज्ञान :

तुलसीदास जी ने राम के शील, शक्ति और सौन्दर्य से युक्त चरित्र को दर्षाया हे। वे ज्ञान, कर्म की अलग–अलग महत्ता स्वीकार करते हुए भक्ति को श्रेष्ठ मानते हैं। उनकी भक्ति वैधी कोटि में आती है तथा नवधा भक्ति के प्रायः सभी अंगों का विधान है। उनका मानना है ''भगतिहि ग्यानहि नहि कछु भेदः उभय हरहि भव संभव खेदा।''

1. डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदीय हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ0 233,235

2. तुलसीदास, रामचरितमानस, 114 ख/7

जीव और ब्रह्म :

तुलसीदास जी की भक्ति का विषिष्ट, अद्वैतवाद से प्रभावित है। इनके लिए जीव भी सत्य है क्योंकि वह ब्रह्म का अंष हैं और जीव व ब्रह्म में अंष–अंषी भाव है। तुलसीदास जी ने भेदभाव और अभेदभाव दोनों का समन्वय किया है। स्वरुप की दृष्टि से जीव और ईष्वर अभेद है। यह ईष्वर का अंग है, अतः ईष्वर की भांति ही सत्य, चेतन और आनन्दमय है।[1]

शैव और वैष्णव :

शाक्त, शैव और वैष्णव सभी सम्प्रदायों में पारस्परिक वैमनस्य पनप चुका था। वैष्णव विष्णु के उपासक थे, शैव षिवजी के तथा शाक्त शक्ति के। तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' में सेतु बनाने से पहले राम द्वारा षिवजी की उपासना दिखाकर सभी सम्प्रदायों में समन्वय स्थापित किया।

निर्गुण व सगुण :

तुलसीदास से पहले भक्ति मार्ग सगुण और निर्गुण भक्ति धाराओं में विभक्त हो चुका था। तुलसीदास ने इन विषमताओं को समाप्त करने के लिए अपने आराध्य श्रीराम को सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में देखा और उपासना की।

1. तुलसीदास, रामचरितमानस, 71 / 71

परिवारिक समन्वय :

तुलसीदास जी ने पिता, पुत्र, पति, पत्नी, सास, पुत्रवधु, भाई, स्वामी, सेवक आदि के आदर्ष पात्रों के रूप में प्रस्तुत करके पारिवारिक समन्वय प्रस्तुत किया है।

विद्या और अविद्या माया

तुलसीदास की विद्या माया शंकराचार्य की माया से भिन्न है। क्योंकि जगत की रचना करती है और भक्तों का कल्याण भी करती है। उनके अनुसार माया की भाव रूपा अभिन्न शक्ति है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि तुलसीदास ने तत्कालीन संस्कृतियों, जातियों, धर्मावलंबियों के बीच समन्वय स्थापित करके समाज को एक नई दिषा प्रदान की। साकारवादी होते हुए निराकार की उपासना का महत्व प्रतिपादित कर दोनों में अभेद स्थापित करने का प्रयास किया है। उन्होंने अपने कृतित्व में सभी संप्रदायों के प्रति समन्वयकारी दृष्टिकोण अपनाकर जनता को एकता के सूत्र में पिरोने का प्रयास किया।